

सामाजिक व्यवहार में आत्म-संयम एवं अहिंसात्मक दृष्टिकोण के विकास में ध्यान की भूमिका : प्रेक्षा ध्यान के संदर्भ में एक अध्ययन

रश्मि छाबड़ा, शोधार्थी, शारीरिक शिक्षा संकाय, टांटिया विश्विद्यालय, श्रीगंगानगर (राजस्थान), rashmichhabra1412@gmail.com

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां, अधिष्ठाता, शारीरिक शिक्षा संकाय, टांटिया विश्विद्यालय, श्रीगंगानगर (राजस्थान)

सारांश

समकालीन विश्व में विज्ञान, प्रौद्योगिकी और आर्थिक विकास के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति के बावजूद हिंसा, युद्ध, असहिष्णुता, सामाजिक संघर्ष तथा मानवीय संवेदनाओं के ह्रास की स्थितियाँ गंभीर चिंता का विषय बनी हुई हैं। यह परिस्थिति इस प्रश्न को जन्म देती है कि क्या बाह्य विकास अपने आप में मानव विकास का पर्याप्त आधार है? प्रस्तुत अध्ययन इसी प्रश्न को व्यक्ति के आंतरिक विकास, आत्म-संयम और सामाजिक व्यवहार के संदर्भ में देखता है। अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य यह समझना है कि ध्यान, विशेषतः प्रेक्षा ध्यान, व्यक्ति में आत्म-जागरूकता एवं आत्म-संयम के विकास के माध्यम से सामाजिक व्यवहार को किस प्रकार प्रभावित कर सकता है।

इस अध्ययन में श्रीगंगानगर क्षेत्र के ग्रामीण महाविद्यालयों में अध्ययनरत 100 छात्रों को सम्मिलित किया गया, जिनमें 50 छात्रों प्रयोगात्मक तथा 50 नियंत्रण समूह में थीं। प्रयोगात्मक समूह को 12 सप्ताह तक सप्ताह में पाँच दिन, प्रतिदिन 60 मिनट का प्रेक्षा ध्यान प्रशिक्षण दिया गया। प्रशिक्षण में कायोत्सर्ग, श्वास प्रेक्षा, शरीर प्रेक्षा, वर्ण प्रेक्षा, अनुप्रेक्षा तथा स्वाध्याय को सम्मिलित किया गया। सामाजिक व्यवहार के मूल्यांकन में सहयोग, सहानुभूति, सामाजिक समायोजन, संप्रेषण कौशल, उत्तरदायित्व, आत्म-संयम एवं समूह सहभागिता जैसे आयामों को ध्यान में रखा गया।

अध्ययन में प्रयोगात्मक समूह की 50 छात्रों में से 39 में सामाजिक व्यवहार के स्तर पर सकारात्मक परिवर्तन देखे गए। क्रोध में कमी, स्वभाव में सहज प्रसन्नता तथा निराशा एवं भय की भावनाओं में सकारात्मक परिवर्तन विशेष रूप से परिलक्षित हुए। निष्कर्षतः प्रेक्षा ध्यान को व्यक्ति के आत्म-संयम, भावनात्मक संतुलन एवं सकारात्मक सामाजिक व्यवहार के विकास में सहायक एक संभावित साधना-पद्धति के रूप में देखा जा सकता है।

प्रमुख शब्द: प्रेक्षा ध्यान, आत्म-संयम, सामाजिक व्यवहार, अहिंसा, ध्यान, भावनात्मक नियंत्रण, भारतीय ज्ञान परम्परा

1. भूमिका

*किसने जलाई बस्तियाँ, बाजार क्यों लूटे,
मैं चाँद पा गया था, मुझे कुछ पता नहीं।*

डॉ. बपीर बद्र की इन पंक्तियों में आधुनिक सभ्यता की एक गहरी विडम्बना अभिव्यक्त होती है। मनुष्य ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम से पृथ्वी से बाहर अंतरिक्ष तक पहुँचने की क्षमता अर्जित कर ली है। चिकित्सा, संचार, परिवहन, कृत्रिम बुद्धिमत्ता तथा अंतरिक्ष विज्ञान सहित अनेक क्षेत्रों में मानव उपलब्धियाँ अद्भुत हैं। किंतु इसी सभ्यता के सामने युद्ध, हिंसा, आतंक, असहिष्णुता, सामाजिक संघर्ष और मानवीय पीड़ा की समस्याएँ भी निरंतर उपस्थित हैं। इस विरोधाभास के कारण यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो जाता है कि “क्या बाहरी प्रगति को ही वास्तविक मानव विकास माना जा सकता है?”

समकालीन वैश्विक परिस्थितियाँ इस प्रश्न को और अधिक गंभीर बनाती हैं। विभिन्न क्षेत्रों में सशस्त्र संघर्षों के कारण सामान्य नागरिकों, बच्चों, महिलाओं तथा अन्य संवेदनशील समूहों को गंभीर मानवीय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। युद्ध केवल भौतिक विनाश नहीं करता, बल्कि व्यक्ति और समुदाय के मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक संबंधों तथा भविष्य के प्रति विश्वास को भी प्रभावित करता है। इसी प्रकार समाज के दैनिक जीवन में भी क्रोध, असहिष्णुता, आक्रामकता, भेदभाव तथा संवादहीनता जैसी प्रवृत्तियाँ सामाजिक समरसता के लिए चुनौती उत्पन्न करती हैं।

इन परिस्थितियों में मानव विकास को केवल भौतिक उपलब्धियों के आधार पर देखना पर्याप्त नहीं है। यदि मनुष्य ने बाहरी संसार को नियंत्रित करने की क्षमता तो विकसित कर ली, लेकिन अपने क्रोध, आवेग, भय, घृणा और हिंसात्मक प्रतिक्रियाओं को नियंत्रित करने की क्षमता विकसित नहीं की, तो विकास की प्रक्रिया अधूरी रह जाती है। वास्तविक विकास में “बाह्य प्रगति के साथ आंतरिक अनुशासन एवं मानवीय चेतना का विकास” भी परम आवश्यक है।

यहीं से “आत्म-संयम (मसबिवदजतवस)” की अवधारणा महत्वपूर्ण हो जाती है। आत्म-संयम व्यक्ति की उस क्षमता को संदर्भित करता है जिसके माध्यम से वह अपनी भावनाओं, आवेगों एवं प्रतिक्रियाओं को पहचानकर

उन्हें परिस्थितियों के अनुरूप नियंत्रित कर पाता है। क्रोध की स्थिति में तत्काल प्रतिक्रिया न करना, असहमति के बावजूद संवाद बनाए रखना, दूसरे व्यक्ति की भावनाओं को समझना तथा संघर्ष की स्थिति में हिंसात्मक प्रतिक्रिया के स्थान पर विवेकपूर्ण व्यवहार करना आत्म-संयम के महत्वपूर्ण संकेतक हैं।

आत्म-संयम का सामाजिक व्यवहार से भी गहरा संबंध है। जिस व्यक्ति में अपनी भावनाओं एवं आवेगों के प्रति अधिक सजगता होती है, उसके लिए सहयोग, सहानुभूति, उत्तरदायित्व, सामाजिक समायोजन एवं प्रभावी संप्रेषण जैसे व्यवहार विकसित करना अपेक्षाकृत सरल हो सकता है। इसके विपरीत अनियंत्रित क्रोध और आवेगशीलता व्यक्ति के सामाजिक संबंधों में तनाव तथा संघर्ष को जन्म दे सकती है।

भारतीय ज्ञान परम्परा ने तो इस समस्या को आधुनिक मनोविज्ञान से भी बहुत पहले पहचान लिया था। भारतीय चिंतन में मानव विकास को बाह्य उपलब्धियों की अपेक्षा "आत्म-विजय" से जोड़ा गया है। योग, बौद्ध एवं जैन परम्पराओं में मन, वचन और कर्म के संयम को व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन की आधारभूत आवश्यकता माना गया है। विशेष रूप से जैन दर्शन में "अहिंसा, संयम, आत्मनिरीक्षण एवं अपरिग्रह" को जीवन-मूल्यों के रूप में विकसित किया गया है।

इसी परम्परा में "प्रेक्षा ध्यान" एक महत्वपूर्ण ध्यान-पद्धति के रूप में सामने आता है। आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा व्यवस्थित रूप से विकसित प्रेक्षा ध्यान का आधार व्यक्ति को स्वयं के भीतर देखने, अपनी शारीरिक एवं मानसिक प्रक्रियाओं के प्रति सजग होने तथा भावनात्मक प्रतिक्रियाओं को समझने की क्षमता विकसित करना है। कायोत्सर्ग, श्वास प्रेक्षा, शरीर प्रेक्षा, वर्ण प्रेक्षा, अनुप्रेक्षा तथा स्वाध्याय इसके ऐसे घटक हैं जो व्यक्ति को क्रमशः विश्राम, जागरूकता, आत्म-अवलोकन एवं सकारात्मक चिंतन की दिशा में ले जाते हैं। प्रेक्षा ध्यान का महत्व इस बात में है कि यह व्यक्ति को बाहरी परिस्थितियों को बदलने से पहले "अपनी प्रतिक्रिया को देखने" का अवसर प्रदान करता है। उदाहरणतः किसी परिस्थिति में क्रोध उत्पन्न होना एक स्वाभाविक भावनात्मक प्रतिक्रिया हो सकती है, किंतु उस क्रोध के आधार पर तत्काल आक्रामक व्यवहार करना आवश्यक नहीं है। ध्यान व्यक्ति और उसकी प्रतिक्रिया के बीच एक सजगता का अंतराल विकसित करने में सहायक हो सकता है। यही अंतराल आत्म-संयम और विवेकपूर्ण सामाजिक व्यवहार की आधारभूमि बन सकता है।

इस दृष्टि से ध्यान को केवल मानसिक शांति प्राप्त करने की तकनीक मानना इसके व्यापक सामाजिक महत्व को सीमित करना होगा। यदि ध्यान व्यक्ति में आत्म-जागरूकता, भावनात्मक नियंत्रण, सहानुभूति एवं संयम विकसित करता है, तो उसका प्रभाव व्यक्तिगत स्तर से आगे बढ़कर सामाजिक संबंधों तक पहुंच सकता है। इस प्रकार "अहिंसा केवल बाहरी आचरण का नियम न रहकर आंतरिक चेतना एवं आत्म-संयम की अभिव्यक्ति" बन सकती है।

आधुनिक अनुसंधान भी ध्यान एवं उपदकनिसदमे आधारित अध्ययनों को आत्म-नियमन, भावनात्मक नियंत्रण तथा सामाजिक व्यवहार के संदर्भ में अध्ययन कर रहा है। उपलब्ध शोधों से यह संकेत मिलता है कि उपदकनिसदमे व्यक्ति की भावनात्मक प्रतिक्रियाओं को नियंत्रित करने, आत्म-जागरूकता बढ़ाने तथा सकारात्मक सामाजिक व्यवहार को प्रोत्साहित करने में सहायक हो सकता है। हालाँकि इन अध्ययनों का बड़ा भाग उपदकनिसदमे या अन्य ध्यान-पद्धतियों पर केंद्रित है; भारतीय ज्ञान परम्परा में विकसित "प्रेक्षा ध्यान और सामाजिक व्यवहार में आत्म-संयम" के संबंध का अनुभवजन्य अध्ययन अभी भी अपेक्षाकृत सीमित है।

इसी शोध-अंतर को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन में ग्रामीण महाविद्यालयीन छात्राओं के सामाजिक व्यवहार पर प्रेक्षा ध्यान के प्रभाव का अध्ययन किया गया। अध्ययन विशेष रूप से इस बात पर केंद्रित है कि क्या नियमित प्रेक्षा ध्यान के माध्यम से व्यक्ति के भीतर ऐसा आत्म-संयम विकसित किया जा सकता है जो उसके सामाजिक व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन के रूप में दिखाई दे।

2. आत्म-संयम, सामाजिक व्यवहार एवं अहिंसात्मक दृष्टिकोण

सामाजिक जीवन मूलतः पारस्परिक संबंधों पर आधारित है। व्यक्ति अपने परिवार, मित्रों, सहपाठियों, शिक्षकों तथा व्यापक समाज के साथ निरंतर अंतःक्रिया करता है। इन संबंधों की गुणवत्ता केवल व्यक्ति के ज्ञान या बुद्धि से निर्धारित नहीं होती, बल्कि उसके भावनात्मक नियंत्रण, सहानुभूति, संवाद-कौशल और आत्म-संयम पर भी निर्भर करती है। आत्म-संयम व्यक्ति को अपनी तात्कालिक इच्छाओं एवं भावनात्मक प्रतिक्रियाओं पर विवेकपूर्ण नियंत्रण स्थापित करने में सहायता करता है। सामाजिक संदर्भ में इसका महत्व इसलिए बढ़ जाता है क्योंकि अनेक संघर्ष तत्काल प्रतिक्रियाओं, गलतफहमियों और अनियंत्रित भावनाओं से उत्पन्न होते हैं।

अहिंसात्मक दृष्टिकोण का अर्थ केवल शारीरिक हिंसा से बचना नहीं है। इसमें विचार, भाषा और व्यवहार के स्तर पर दूसरे व्यक्ति के प्रति सम्मान, सहानुभूति एवं संवेदनशीलता का विकास भी सम्मिलित है। इस अर्थ में अहिंसा का आधार बाहरी नियंत्रण से अधिक “आंतरिक संयम” है।

प्रेक्षा ध्यान इसी आंतरिक आयाम को संबोधित करता है। व्यक्ति जब अपने श्वास, शरीर, विचार एवं भावनाओं का सजग अवलोकन करता है, तो वह अपनी प्रतिक्रियाओं को पहचानने और उन्हें नियंत्रित करने की दिशा में आगे बढ़ सकता है। इसलिए प्रेक्षा ध्यान और सामाजिक संयम के मध्य एक संभावित मनोवैज्ञानिक संबंध स्थापित किया जा सकता है।

3. प्रेक्षा ध्यान : आत्म-जागरूकता से सामाजिक संयम तक

प्रेक्षा ध्यान का मूल भाव है “स्वयं को स्वयं के द्वारा देखना एवं अनुभव करना।” यह व्यक्ति को अपनी आंतरिक प्रक्रियाओं के प्रति सजग बनाने का प्रयास करता है। कायोत्सर्ग शारीरिक एवं मानसिक तनाव से विश्राम की स्थिति विकसित करता है, श्वास प्रेक्षा ध्यान को वर्तमान क्षण में स्थिर करने में सहायता करती है और शरीर प्रेक्षा शरीर तथा संवेदनाओं के प्रति जागरूकता बढ़ाती है।

वर्ण प्रेक्षा एवं अनुप्रेक्षा सकारात्मक भावों और विचारों को विकसित करने की दिशा में कार्य करती हैं, जबकि स्वाध्याय व्यक्ति को आत्मचिंतन एवं आत्मविश्लेषण का अवसर प्रदान करता है। इन सभी प्रक्रियाओं का समन्वय व्यक्ति में ऐसी सजगता विकसित कर सकता है जिसमें वह अपने व्यवहार को अधिक स्पष्टता से देख सके। इस प्रकार प्रेक्षा ध्यान की प्रक्रिया को इस रूप में समझा जा सकता है—

“आत्म-अवलोकन → आत्म-जागरूकता → भावनात्मक नियंत्रण → आत्म-संयम → सकारात्मक सामाजिक व्यवहार → अहिंसात्मक दृष्टिकोण” यह संबंध इस अध्ययन के वैचारिक ढाँचे का आधार है।

4. अध्ययन का संक्षिप्त अनुभवजन्य आधार

प्रस्तुत अध्ययन में 18–22 वर्ष आयु वर्ग की 100 ग्रामीण महाविद्यालयीन छात्राओं को सम्मिलित किया गया। 50 छात्राओं को प्रयोगात्मक तथा 50 को नियंत्रण समूह में रखा गया। प्रयोगात्मक समूह को 12 सप्ताह तक सप्ताह में पाँच दिन, प्रतिदिन 60 मिनट प्रेक्षा ध्यान का अभ्यास कराया गया। अध्ययन में सामाजिक व्यवहार के लिए सहयोग, सहानुभूति, सामाजिक समायोजन, संप्रेषण कौशल, उत्तरदायित्व, आत्म-संयम एवं समूह सहभागिता जैसे आयामों को ध्यान में रखा गया। प्राप्त परिणामों में प्रयोगात्मक समूह की 50 छात्राओं में से “39 छात्राओं के सामाजिक व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन” पाया गया। विशेष रूप से क्रोध में कमी, स्वभाव में सहज प्रसन्नता तथा निराशा एवं भय की भावनाओं में सकारात्मक परिवर्तन दिखाई दिए।

इन परिणामों को केवल व्यवहारगत परिवर्तन के रूप में देखना पर्याप्त नहीं होगा। ये परिवर्तन इस संभावना की ओर संकेत करते हैं कि नियमित ध्यान-अभ्यास व्यक्ति को अपनी भावनात्मक प्रतिक्रियाओं के प्रति अधिक सजग बनाकर सामाजिक परिस्थितियों में अधिक संयमित प्रतिक्रिया देने में सहायता कर सकता है।

5. चर्चा एवं विवेचना

प्रस्तुत अध्ययन के परिणाम इस धारणा का समर्थन करते हैं कि सामाजिक व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन के लिए केवल बाहरी अनुशासन पर्याप्त नहीं है; व्यक्ति के भीतर आत्म-जागरूकता एवं आत्म-संयम का विकास भी आवश्यक है। प्रयोगात्मक समूह में क्रोध में कमी तथा स्वाभाविक प्रसन्नता में वृद्धि इसी आंतरिक परिवर्तन की संभावित अभिव्यक्तियाँ मानी जा सकती हैं।

यहाँ प्रेक्षा ध्यान की भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती है। ध्यान व्यक्ति को अपनी भावनाओं से तुरंत संचालित होने के स्थान पर उन्हें देखने और समझने का अवसर देता है। इस प्रक्रिया में भावनात्मक उत्तेजना और व्यवहारगत प्रतिक्रिया के बीच एक सजगता विकसित हो सकती है। यही सजगता आत्म-संयम का आधार बनती है।

अध्ययन में निराशा और भय की भावनाओं में देखे गए सकारात्मक परिवर्तन भी महत्वपूर्ण हैं। भय या निराशा की तीव्रता व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार को प्रभावित कर सकती है। यदि व्यक्ति अपनी भावनात्मक स्थिति को पहचानने तथा उसका नियमन करने में सक्षम होता है, तो वह सामाजिक परिस्थितियों में अधिक संतुलित ढंग से व्यवहार कर सकता है।

इसी प्रकार सहयोग, सहानुभूति और समूह सहभागिता जैसे सामाजिक व्यवहारों का विकास भी आत्म-केंद्रित प्रतिक्रियाओं से आगे बढ़ने की क्षमता से जुड़ा है। ध्यान व्यक्ति को अपने आंतरिक अनुभवों का निरीक्षण

करने के साथ-साथ दूसरों के प्रति अधिक संवेदनशील होने की संभावना प्रदान करता है। इस दृष्टि से प्रेक्षा ध्यान का सामाजिक महत्व व्यक्ति के अकेले मानसिक स्वास्थ्य से भी आगे जाता है।

यह निष्कर्ष पूर्ववर्ती ध्यान-आधारित शोधों के साथ भी संगत है, जिनमें ध्यान एवं उपदकनिसदमे को भावनात्मक नियंत्रण, आत्म-नियमन और यथोचित समाजिक व्यवहार से जोड़ा गया है। तथापि प्रस्तुत अध्ययन की विशेषता यह है कि इसमें "प्रेक्षा ध्यान की भारतीय पृष्ठभूमि" को ग्रामीण महाविद्यालयीन छात्राओं के सामाजिक व्यवहार के संदर्भ में अनुभवजन्य रूप से देखा गया है।

6. निष्कर्ष

मानव सभ्यता की वास्तविक प्रगति का मूल्यांकन केवल इस आधार पर नहीं किया जा सकता कि उसने विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में कितनी उपलब्धियाँ अर्जित की हैं। मानव विकास की पूर्णता इस बात में भी निहित है कि व्यक्ति अपने भीतर के क्रोध, आवेग, भय और असंयम पर कितना नियंत्रण स्थापित कर पाता है।

प्रस्तुत अध्ययन से प्राप्त परिणाम संकेत करते हैं कि प्रेक्षा ध्यान व्यक्ति में आत्म-जागरूकता एवं आत्म-संयम को विकसित करने तथा उसके सामाजिक व्यवहार को सकारात्मक दिशा प्रदान करने में उपयोगी हो सकता है। 50 में से 39 छात्राओं में देखे गए सकारात्मक व्यवहारगत परिवर्तन इस संभावना को अनुभवजन्य आधार प्रदान करते हैं।

अतः प्रेक्षा ध्यान को केवल व्यक्तिगत मानसिक शांति की साधना के रूप में नहीं, बल्कि "सामाजिक संयम, सह-अस्तित्व, सहानुभूति और अहिंसात्मक व्यवहार के विकास की संभावित प्रक्रिया" के रूप में भी देखा जाना चाहिए। यदि बाहरी विकास के साथ मनुष्य के भीतर संयम, करुणा और अहिंसात्मक चेतना का विकास हो, तभी विकास वास्तव में मानवीय विकास कहलाएगा।

7. शैक्षिक एवं सामाजिक निहितार्थ

प्रेक्षा ध्यान को महाविद्यालयीन शिक्षा में विद्यार्थी-कल्याण एवं जीवन-कौशल कार्यक्रमों के साथ जोड़ा जा सकता है। विशेष रूप से ग्रामीण महाविद्यालयों में यह कम संसाधनों में संचालित किया जा सकने वाला व्यवहारगत एवं मानसिक स्वास्थ्य हस्तक्षेप बन सकता है। भविष्य में बड़े नमूने, विभिन्न आयु वर्गों तथा पुरुष एवं महिला प्रतिभागियों को सम्मिलित करते हुए दीर्घकालिक अध्ययन किए जाने चाहिए। साथ ही प्रेक्षा ध्यान के विभिन्न घटकों के पृथक प्रभाव तथा आत्म-संयम, आक्रामकता, सहानुभूति और अहिंसात्मक व्यवहार के मध्य संबंधों का परीक्षण भी उपयोगी होगा।

संदर्भ सूची (उपइसपवहतंचील)

1. कपोर, एस. (2011)। "प्रेक्षा ध्यान के माध्यम से संवेगात्मक स्थिरता एवं व्यवहारगत सुधार का मूल्यांकन।" जर्नल ऑफ योगिक साइंसेज, 14(2), 45-58.
2. गोलेमैन, डैनियल (2006)। इमोशनल इंटेलिजेंस: व्हाई इट कैन मैटर मोर दैन आईक्यू। न्यू यॉर्क: बेंटम बुक्स।
3. गैरेट, हेनरी ई. (2005)। स्टैटिस्टिक्स इन साइकोलॉजी एंड एजुकेशन। नई दिल्ली: कल्याणी पब्लिशर्स।
4. टैंग, वाई. वाई., मा, वाई., वांग, जे. एवं सहयोगी (2007)। "शॉर्ट-टर्म मेडिटेशन ट्रेनिंग इम्पूल्स अटेंशन एंड सेल्फ-रेगुलेशन।" प्रोसीडिंग्स ऑफ द नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज (छो), 104(43), 17152-17156.
5. डेविडसन, आर. जे., कबात-ज़िन, जे. एवं सहयोगी (2003)। "अल्टरेशंस इन ब्रेन एंड इम्यून फंक्शन प्रोड्यूसड बाई माइंडफुलनेस मेडिटेशन।" साइकोसोमैटिक मेडिसिन, 65(4), 564-570.
6. द्विवेदी, कपिल देव (2009)। योग एवं ध्यान पद्धति: एक वैज्ञानिक विश्लेषण। वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन।
7. बद्र, बशीर (2017)। कुल्लियात-ए-बशीर बद्र (प्रतिनिधि कविताएँ एवं गज़लें)। नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
8. भारद्वाज, आर. (2010)। "महाविद्यालयीन विद्यार्थियों के व्यक्तित्व परिष्कार में प्रेक्षा ध्यान की भूमिका।" भारतीय आधुनिक शिक्षा, 31(3), 88-99.
9. महाप्रज्ञ, आचार्य (2010)। प्रेक्षा ध्यान: कायोत्सर्ग। लाडनू, राजस्थान: जैन विश्व भारती प्रकाशन।
10. महाप्रज्ञ, आचार्य (2012)। प्रेक्षा ध्यान: सिद्धांत और साधना। लाडनू, राजस्थान: जैन विश्व भारती प्रकाशन।
11. महाप्रज्ञ, आचार्य (2014)। प्रेक्षाध्यान: लेश्या-ध्यान (परसेप्शन ऑफ साइकिक कलर्स)। लाडनू, राजस्थान: जैन विश्व भारती प्रकाशन।
12. शर्मा, ओ. पी. (2001)। "किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य और तनाव प्रबंधन पर प्रेक्षा ध्यान का प्रयोगात्मक अध्ययन।" जर्नल ऑफ एजुकेशन एंड साइकोलॉजी, 59(1), 12-24.
13. शास्त्री, डी. (2019)। "ध्यान और सामाजिक व्यवहार: एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन।" पुणे: विश्वविद्यालय प्रकाशन।
14. शेखावत, पी. एस. (2008)। "प्रेक्षा ध्यान के नियमित अभ्यास से क्रोध मुक्ति और संवेगात्मक नियंत्रण: एक अध्ययन।" मनोविज्ञान शोध पत्रिका, 12(4), 201-214.